विषय :- शोध की व्यापक रिपोर्ट जमा करने हेतु।

मैंने पीएच.डी. 30.01.2018 में हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली में जमा की थी। और 19 नवम्बर 2018 में मुझे दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा पीएच.डी. की उपाधि प्रदान की गई थी। मेरे पीएच.डी. शोध का विषय 'रीतिकालीन साहित्य की स्त्री का समाजवैज्ञानिक अध्ययन' रहा है। और मेरे शोध निर्देशक हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय में नियुक्त प्रो. पूरन चंद टंडन रहे हैं। मैंने शैक्षणिक अवकाश की समयावधि की शोध की प्रगति रिपोर्ट कॉलेज में (छ: - छ: माह की) कॉलेज में शैक्षणिक अवकाश के बाद सर्विस ज्वाइनिंग के साथ जमा कर दी थी। अब पीएच.डी. का कार्य पूर्ण होने के बाद और उपाधि प्राप्त होने के पश्चात् मेरे शोध की व्यापक रिपोर्ट यहां संलग्न है।

दिनांक - 31.08.2020

डॉ. अंशु सिंह अग्रवाल
हिन्दी विभाग
लक्ष्मीबाई कॉलेज,
दिल्ली

शोध-विषय - "रीतिकालीन साहित्य की स्त्री का समाजवैज्ञानिक अध्ययन"

पीएच.डी. शोध की व्यापक रिपोर्ट

हिन्दी साहित्य का मध्यकाल में रीतिकाल का अपना ही महत्त्व है। उस समय का समाज सामंतवादी था। भारत पर मुगल शासन कर रहे थे। सभी कवि राजाश्रित थे। सामंती दृष्टि में नारी को भोग की वस्तु माना गया था। उस काल में कवियों ने राजाओं को प्रसन्न करने के लिए उनके चित्त के अनुकूल नारी के रूप–सौंदर्य (भोग रूप) का वर्णन किया।

शोध–प्रबंधके में प्रथम अध्याय में 'समाज' के अर्थ एवं उसकी शास्त्रीय अवधारणा एवं स्वरूप को स्पष्ट किया गया है। साहित्य समाज का दर्पण है! समाज के परिवेश का यथार्थ–स्वरूप साहित्य द्वारा ही उद्घाटित होता है क्योंकि वह जनता की संवेदना से संबद्ध होता है। साहित्यकार का दायित्व है कि वह जनता की चितवृत्तियों को साहित्य में अभिव्यंजित करे जिससे काल–बोध के अनुसार युगीन परिवेश और समाज की मानसिकता का परिचय मिल सके। साहित्य समाज–सापेक्ष होता है।

समाज व्यक्तियों के संबधों की वह व्याख्या है जो व्यक्तियों की अंतः क्रिया एवं समूहों के निर्माण में सहायक होती है। प्रायः समाज से तात्पर्य एक क्षेत्र व्यक्ति के उन समूहों से लिया जाता है जो किसी सांस्कृतिक, राजनैतिक ईकाई एवं परिवेश में उस क्षेत्र के व्यक्तियों द्वारा भागीदारी को सुनिश्चित करते हैं। समाज मुख्यतया मूल्यों, प्रवृत्तियों, आचारों, प्रथाओं, भूमिका, परिस्थिति की एक व्यवस्था होती है। जिसके कारण व्यक्ति की किसी समाज में प्रस्थिति तय होती है। समाज संबंधों के आयामों द्वारा जोकि अपने स्वरूप में सामाजिक होते हैं, तय होते हैं। समाज मानवीय अन्तः क्रियाओं की एक व्याख्या है। मनुष्य अपनी आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाज का निर्माण

करती है। क्योंकि वह इन आवश्यकताओं जैसे–भोजन, काम, सुरक्षा आदि के लिए व्यक्ति स्वयं स्थान नहीं होता है। इस प्रकार की आवश्यकता ही उसे किसी समूह का सदस्य बनाती है एवं किसी लोकाचार, आधार–व्यवहार की प्रणाली को निर्मित करने के लिए विवश करती है। ताकि मनुष्य का जीवन सुचारू रूप से चल सके इसलिए ही कहा जाता है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है।

यहाँ समाज–विज्ञान से अभिप्राय और उसके स्वरूप का भी वर्णन किया गया है। समाज–विज्ञान के विविध आयाम होते हैं। उनको भी स्पष्ट किया गया है। भारतीय समाज, व्यक्ति, परिवार और उनका आपस में अंतर्सम्बन्ध होता है।

द्वितीय अध्याय में 'रीति' का अभिप्राय, अवधारणा और 'रीति' की साहित्यक परम्परा का वर्णन किया गया है। रीतिकाल में 'रीति' शब्द का प्रयोग, रीति तत्त्व से अभिप्राय को भी स्पष्ट किया गया है। यहाँ रीतिकालीन काव्य रचना के पीछे कौन–कौन सी परिस्थितियाँ थी, उनका वर्णन विस्तार से हुआ है। रीतिसाहित्य की परम्परा और रीतिकाल में कवियों का वर्गीकरण–रीतिबद्ध, रीतिसिद्ध और रीतिमुक्त कवियों में किया गया है। उस समय समाज में भोग–विलासिता व्याप्त थी उसके फलस्वरूप ही उस समय के काव्यों में भी भोग–भावना का आधिक्य मिलता है। रीतिकालीन काव्य में काल में सौन्दर्य वर्णन, चमत्कार प्रदर्शन, आलंकारिता को देखा जा सकता है।

शोध–प्रबंध के तृतीय अध्याय में रीतिकालीन समाज उसकी अवधारण, स्वरूप का स्पष्ट वर्णन किया गया है। रीतिकालीन समाज पूर्णत सामंतवादी समाज था, जिसके केन्द्र में सम्राट स्वयं था और इर्द–गिर्द सारा ताना–बाना बुना गया था। विलासिता इस सामंती जीवन के रग–रग में बसी थी। उस समय मुगल साम्राज्य अपने पूर्ण यौवन को प्राप्त कर ह्रासोन्मुख हो चला था। उस समय कानून व्यवस्था बादशाह का इच्छा से चलती थी। उस युग में अर्थव्यवस्था का आधार

कृषि था। आर्थिक दृष्टि से यहाँ वर्ग–विभाजन भी था यहाँ कारीगरों का जमकर आर्थिक शोषण हुआ था। विदेशी व्यापारियों का भारतीय बाजार में पूर्णतया हस्तक्षेप था। हमारे ही धन से खुद मालामाल होकर हमें ही निर्धन कर दिया था। ऐतिहासिक परिस्थितियों के अन्तर्गत महमूद गजनवी, मोहम्मद गौरी और तुर्कों के आक्रमण से उस समय के समाज पर पड़े प्रभाव को बताया है। अकबर और अन्य मुगल सम्राटों के समय में समाज में संस्कृति और सभ्यता का पुनरोदय हुआ है। संगीतज्ञों को राजाश्रय में सम्मानपूर्वक रखा जाता था। तानसेन की राग एवं रागनियाँ आज तक भी भारत में सर्वत्र प्रचलित है। रीतिकालीन युग धार्मिक संघर्ष का भीषणतम रूप था। परन्तु सूफी और संतकवियों ने इसी भीषण समय में संघर्ष के स्थान पर समन्वय की राह को चुना। रीतिकाल के अधिकांश कवियों ने राजाश्रय में ही काव्य रचना की क्योंकि उनको जीविकोपार्जन के लिए राजदरबार की शरण में जाना पड़ा।

इस अध्याय में उस युग के नागरिक एवं उस समय के परिवेश का भी वर्णन किया गया है। भारतीय परिवेश में हिन्दु–मुस्लिम संस्कृति की दो मिली–जुली धाराएँ उपस्थित होती है। मध्ययुग में पर्व और उत्सव का समाज में बहुत महत्वपूर्ण स्थान था। पर्वों–उत्सवों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया हैं समाज में धर्म के प्रति अन्य आस्था विद्यमान थी। जादू–टोने, टोटके, आडम्बर, पूजा–पाठ का प्रचलन था। रीतिकालीन समाज में स्त्री–पुरुष की वेशभूषा और आभूषणों का चलन था। यहाँ स्त्रियों के सिर से लेकर पैरों की अंगुलियों का वर्णन किया गया हैं। उस समय समाज में स्त्री और पुरुषों में अत्यधिक अंतर समझा जाता था। पुरुष की प्रधानता थी और स्त्री को भोग की वस्तु माना जाता था। परिवार में स्वकीया नायिका (पत्नी) को ही श्रेष्ठ और उत्तम नारी माना जाता था और स्त्री को संतानोत्पत्ति का निमित्त माना है। पर्दा प्रथा, सती प्रथा, दहेज प्रथा का समाज में चलन था।

चतुर्थ अध्याय में रीतिकालीन समाज और रीतिसाहित्य में 'स्त्री' का वर्णन किया गया है। सम्पूर्ण रीतिसाहित्य नायिका पर ही आधारित है। रीतिकालीन कवि राजाश्रित थे। मुगल दरबार में जीविकोपार्जन के लिए राजाओं को प्रसन्न करना ही उनका मुख्य उद्देश्य होता था। राजवंश घोर रूप से सुरा–सुन्दरी में डूबा हुआ था। इसके फलस्वरूप रीतिकालीन कवियों ने राजाओं की मनोवृत्ति के अनुसार उनको प्रसन्न करने के लिए नारी को अपने काव्य का केन्द्र–बिन्दु बनाया। रीतिकाल के लगभग सभी कवियों ने अपने काव्यों में संस्कृत काव्यों के नायिका–भेद को आधार बनाकर रचनाएँ की। घनानन्द, बोधा, ठाकुर, आलम, सेनापति, रहीम, बिहारी, मतिराम, पद्माकर, केशव, भूषण आदि कवियों ने नायिका–भेद परम्परा का पालन किया और अपने काव्यों में नायिका भेद–प्रभेदों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया। रीतिकाल में नायिका–भेद–के विविध आधारों का वर्णन किया गया है– कामसूत्र निहित आधार, काव्यशास्त्रीय आधार, जातियों के आधार पर, गुण के आधार पर, समाजवैज्ञानिक आधार, पारिवारिक परिवेश के आधार पर, सामाजिक–आर्थिक आधार पर, प्रेम के आधार पर, अवस्था के आधार पर, प्रवृत्ति के आधार पर। यहाँ रीतिकालीन नायिका भेद परम्परा का भी वर्णन किया गया है और उस समय स्त्री की क्या पहचान थी को भी बताया गया है। इन कवियों ने संस्कृत काव्य में नायिका–भेद परम्परा से हटकर कुछ मौलिक भेद भी किए है, उन भेदों को भी इस शोध–कार्य में बताया गया है। देव ने जो देश और वास के आधार पर नायिका–भेद किए हैं वे मौलिक भेद हैं। कृपाराम में अवस्था के अनुसार स्वाधीनपतिका का तथा गर्विता के नवीन भेद सरलोक्तिगर्विता की उद्भावना की है, वह उनकी मौलिकता ही है। रहीम ने भी नायिका–भेद निरूपण में मौलिकता का परिचय दिया है।

पंचम अध्याय में रीति साहित्य की 'स्त्री' की अनेक छवियों का वर्णन हुआ उस समय के समाज में स्त्री को सौन्दर्य और भोग की वस्तु माना है।

रीतिकाल के पुरुष को नारी विशेष की वैयक्तिक सत्ता से प्रेम नहीं था, उसे उसके नारीत्व से ही प्रेम था। कवि देव ने 'रस विलास' में नारी के प्रति पुरुष की भावना का वर्णन किया है। नारी के रूप के आधार पर ही उसकी उपादेयता तय की जाती थी। रीतिकालीन काव्य में नारी के प्रेमिका, पत्नी, राजनर्तकी, रूपगर्विता और सामान्या रूप का वर्णन हुआ है। उस समय की नारी सामाजिक अधिकारों से वंचित हुआ करती थी। पर्दा प्रथा, सती प्रथा जैसी बुराईयाँ समाज में व्याप्त थी। भोगवादी दृष्टि ने समाज में नारी को परकीया, गायिका और सामान्या रूप दिया। नारी आर्थिक रूप में स्वतन्त्रता नहीं थी परन्तु वह श्रम–नियोजन करती थी। निम्न वर्ग की स्त्रियाँ धन के लिए पति पर आश्रित नहीं थी। वे स्वतंत्र रूप से व्यवसाय करती थी।

रीतिकाल की स्त्री वस्त्राभूषणों को समर्पित थी। सुन्दर वस्तु या व्यक्ति के प्रति आकर्षित होना स्वभाविक प्रतिक्रिया है। वस्त्र और आभूषण सौन्दर्य अभिवृद्धि के मुख्य साधन है। रीतिकालीन काव्यों के नायिका के वस्त्रों में ओढ़नी, चुनरी और कंचुकी का वर्णन हुआ है और सिर से पैर तक के आभूषणों का वर्णन इन कवियों ने किया है। उस समय सीसफूल, नथ, हार, बावजूद, कटिबंद, नूपुर और बिछिया, मुंदरी आभूषणों का वर्णन घनानन्द, देव मतिराम, बिहारी रीतिकालीन कवियों ने अपने काव्य में किया है।

षष्ठ अध्याय में रीतिसाहित्य की स्त्री का रूप सौन्दर्य और उसका नख–शिख वर्णन किया गया है। रीतिकालीन काव्य पर फारसी काव्य का प्रभाव परिलक्षित होता है। रीतिकाव्य में घोर ऐहिकता और सौन्दर्य का वर्णन अरबी–फारसी का ही प्रभाव है। रीतिकालीन काव्य में फारसी काव्य के प्रभाव के कारण, चमत्कार प्रदर्शन और ऊहात्मता के चित्र दिखाई देते हैं। केशव, मतिराम, बिहारी और पद्माकर जेसे कवि इन काव्यों– संवेगों से प्रभावित दिखते हैं।

संस्कृत काव्यों की विरह दशाओं में हाव–भाव के अधिक्य का प्रभाव हमें रीतिकालीन काव्यों में भी देखा जाता है। संस्कृत में 'नाट्यशास्त्र' व 'दशरूपक' 'रसमंजरी' आदि काव्यों का प्रभाव रीतिकालीन कवियों के काव्यों पर पड़ा। कृपाराम की 'हिततरंगिनी', केशव की 'रसिकप्रिया', 'कविप्रिया', रहीम के 'बरवै नायिका–भेद', सेनापति के 'काव्यकल्पद्रुम' आदि काव्यों पर संस्कृत काव्यों का प्रभाव पड़ा।

इस अध्याय में स्त्री के रूप में लावण्यता, सुकुमारता और गतिशील सौन्दर्य का वर्णन हुआ है। यहाँ नायिका का नख–शिख सौन्दर्य वर्णन भी किया है और स्त्री की प्रसाधन–प्रियता का भी वर्णन विस्तार से किया है। नायिका की श्रृंगार और विरह की अवस्था और दशाओं के आधार पर आंगिक चेष्टाओं का वर्णन किया गया है। अतः रीतिकालीन कवियों ने नारी–सौंदर्य के माँसल चित्र अंकित किए हैं। अंत में इस अध्याय में रीतिकाल में काव्य में स्त्री–विषयक दृष्टि को बतलाया गया है। भारतीय चिंतनधारा के अनुसार रीतिकाल में कवियों ने लज्जावान, शील और मर्यादित गुणों से पूर्ण स्त्री को ही समाज में श्रेष्ठ और सम्मानजक माना है। वे स्वकीया नायिका को ही उत्तम मानते हैं। उस समय समाज में परस्त्री प्रेम और बहुविवाह प्रचलित थे। विहारी के काव्य में 'सौत' का वर्णन प्राप्त होता है। नारी के भामिनी, पुत्रवती आदि रूपों का वर्णन भी रीतिकालीन काव्यों में मिलता है।

सप्तम अध्याय प्रेम और स्त्री का वर्णन किया गया है। यहाँ 'प्रेम' शब्द की उत्पत्ति, अवधारणा और उसके स्वरूप का वर्णन हुआ है। प्रेम के उपादान–सौन्दर्य, प्रकृति, काम, रति, भक्ति और श्रद्धा का वर्णन इस अध्याय में विस्तारपूर्वक किया गया है। रीतिसाहित्य में भावावेश की प्रधानता है। आन्तरिक अनुभूतियों से प्रेरित रीतिसाहित्य में एक आवेग, भावों का सहज प्रवाह है। ये हृदय के कवि थे और

अनुभूति इनकी मूल प्रेरक शक्ति थी। जिसके कारण इनके काव्य में मनोयोगों का अक्षम भण्डार सा प्रतीत होता है। उस काल के साहित्य में प्रेम का उत्कृष्ट रूप स्वकीया नायिका में ही मिलता है। निम्न स्त्री (सामान्या स्त्री) धनोपार्जन के लिए परपुरुष से प्रेम करती थी। उस समय विवाहेत्तर संबंधों के प्रति स्त्री उदासीन नहीं थी। वह स्वयं इन स्थितियों की भोक्ता भी है। इन संबंधों में स्त्री का शोषण हो रहा हो ऐसा वर्णन नहीं है।

आगे यहाँ प्रेम विषयक दृष्टि एवं स्त्री की छवि का वर्णन किया गया है। रीतिकाल के समय के सामंती जीवन की विलासिता ने स्त्री की छवि को प्रभावित किया है। दाम्पत्य के प्रति प्रेम के भी उदाहरण मिलते हैं। स्त्री को भोगवादी दृष्टि से देखा जाता था। बिहारी ने काव्य में बाल वधू का वर्णन है, जहाँ स्त्रीदेह के प्रति शिशुता से ही काम–भाव और पिपासु दृष्टि है। देवर–भाभी के संबधों को भी बिहारी ने बतलाया है। कुलवधु के प्रति देवर की नीयत ठीक नहीं हैं वह उसे काम–पिपासु की दृष्टि से देखता है।

अंत में उपसंहार है। इसमें सभी अध्यायों का निष्कर्ष किया गया है।

Anshu

शोध निर्देशक
प्रो. पूरन चंद टंडन
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

भवनिष्ठ
डॉ. अंशु सिंह झरवाल
हिन्दी विभाग
लक्ष्मीबाई कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली